ISSN 2231-1629
Knowledge Resonance
IMPACT FACTOR 8.072
July-December 2024- Vol. 13 No. 2

राजस्थानी भक्ति–साहित्य में सहजोबाई का वर्तमान सन्दर्भ में विवेचनात्मक अध्ययन

डॉ.सुनील कुमार जलथुरिया
हिन्दी विभाग
अपेक्स स्कूल ऑफ मानविकी एवं कला
अपेक्स विश्वविद्यालय जयपुर।

सारांश
आदिकाल से ही राजस्थानी समाज धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत रहा है। राजस्थान में विभिन्न धर्मावलम्बियों ने समय–समय पर अपनी भक्ति परम्परा की छटा बिखेरी है। यहाँ निर्गुण एवं सगुण दोनों भक्तिधारा को मानने वालों ने साहित्य सृजन किया है। सगुण भक्ति धारा के शैव एवं शाक्त संप्रदाय के लोग प्राचीन काल से ही पल्लवित रहे हैं। संपूर्ण भारत में रामानुज जी, वल्लभाचार्य एवं निंबार्काचार्य आदि संतों ने भक्ति की सरिता बहाई राजस्थान भी इस सरिता से अछूता नहीं रहा और यहाँ विभिन्न प्रकार के संप्रदाय देखने को मिलते हैं। जिनमें पुष्टिमार्ग, निम्बार्क एवं गौड़ीय संप्रदाय प्रमुख है। इसके साथ ही भक्ति की एक अन्यत्र धारा भी प्रवाहित हुई, जिसे निर्गुण भक्ति धारा के नाम से भी जाना जाता है। इस धाराा के उपदेश सीधे एवं सरल थे। इस धारा ने समाज में व्याप्त भेदभाव, ऊँच–नीच, छुआछूत आदि को समाप्त कर लोगों को ईश्वर भक्ति की ओर जोड़ा। इस भक्ति धारा की प्रतिनिधि कवि कबीरदास जी माने जाते हैं। कबीरदास ने अपने उपदेशों में ईश्वर भजन, कीर्तन, नाम–स्मरण एवं गुरू–महिमा पर बल दिया। इस भक्ति धारा का प्रभाव राजस्थान में भी रहा। राजस्थान में इस भक्ति धारा के प्रमुख अनुयायियों में दादूदयाल जी, संत रामचरणजी, गुरू चरणदास जी एवं उनकी शिष्याओं में सहजोबाई और दयाबाई भी प्रमुख रही हैं। इस लेख में संत सहजोबाई की भक्ति–भावना का प्रस्तुतीकरण किया गया है।

शब्द–कुंजीः
निर्गुण, शैव, नाम–स्मरण, गौड़ीय संप्रदाय।

परिचय–

राजस्थान में भक्त कवयित्रियों में मीराबाई के बाद सहजोबाई का नाम आदर के साथ लिया जाता है। आपके पूर्वज राजस्थान के निवासी थे, किंतु बाद में दिल्ली आकर बसे थे। इनके जीवन के बारे में अन्य संतों की भाँति अधिक जानकारी प्राप्त नहीं होती है। सहजोबाई की गद्दी के वर्तमान महंत घनश्यामदास[1] जी ने सन् 2001 में सहजोबाई के प्रमुख ग्रंथ, सहज– प्रकाश का प्रकाशन किया था। इन्होंने इस ग्रंथ में इनका जन्म 02 अगस्त, 1725 ईस्वी माना है। आपका जन्म दिल्ली के परीक्षितपुर में हुआ था। डॉ. श्यामसुन्दर शुक्ल ने भी इस तिथि को प्रमाणिक माना है। कुछ विद्वान सहजोबाई का जन्म–स्थान अलवर के समीप डेहरा ग्राम को भी मानते हैं। बेशक हम कह सकते हैं कि सहजोबाई के पूर्वज डेहरा ग्राम में रहे होंगे किंतु बाद में वे दिल्ली के परीक्षितपुर चले गए।
सहजोबाई के माता–पिता ढूसर कुल के थे। आपके पिता का नाम हरिप्रसाद एवं माता का नाम अनुपी देवी था। आप वाणी में पिताजी का नाम लिखते हुए कहती हैं–
हरि प्रसाद की सुता, नाम है सहजोबाई।
इनके गुरू का नाम संत चरणदास था, जो रिश्ते में इनके मामाजी के पुत्र थे। इनकी शिक्षा–दीक्षा घर में ही हुई थी।

विवाह–

पहले के समय में लड़कियों का बाल–विवाह कर दिया जाता था। इनका भी 11 वर्ष की उम्र में विवाह निश्चित कर दिया गया, किन्तु इनकी विवाह करने में कोई रूचि नहीं थी। विवाह की रस्म के दौरान आशीर्वाद देने के लिए गुरू चरणदास जी को बुलाया गया जो कि उनके मामाजी के पुत्र थे। सहजोबाई की मनःस्थिति देखकर चरणदास जी ने संबोधित करते हुए लिखा–

सहजोबाई तनिक सुहाग पर, कहा गुदाये सीस।
चलना है, रहना नहीं, चलना बिस्वा बीस।।

अर्थात् चरणदास जी ने सहजोबाई को संबोधित करते हुए लिखा कि संसार में हमेशा रहना ही नहीं है और यहाँ से एक दिन सबको जाना है, तो चंद दिनों[2] के सुहाग के लिए सिर के बाल संवारकर श्रृंगार करने से कोई लाभ नहीं है। सहजोबाई के हृदय पर इन शब्दों का जबरदस्त प्रभाव पड़ता है। इन वचनों को सुनकर सहजोबाई ने दुल्हन का वेश उतार दिया। संसार में यह कथन प्रचलित है कि संतों की भविष्यवाणी, ईश्वर की इच्छा एवं होनी को कोई टाल नहीं सकता है। यह बात सुनकर सारे घर वाले मुश्किल में पड़ जाते हैं। क्योंकि तत्कालीन समाज में यह पहली घटना रही होगी, जब किसी लड़की ने शादी से इनकार किया होगा।
किंतु उस परमात्मा के आगे किसी की नहीं चलती है। जब बारात सहजोबाई के द्वार पर आ रही थी। उस समय बारातियों द्वारा की गई आतिशबाजी के कारण घोड़ी

बिदक जाती है और दूल्हा नीचे गिरते ही दम तोड़ देता है। इस घटना से सहजोबाई के परिवार वालों पर चरणदास जी का गहरा प्रभाव पड़ जाता है और सभी उनके अनुयायी बन जाते हैं। इसी घटना से सहजोबाई की भक्ति का सफर प्रारम्भ होता है।

प्रमुख रचनाएँ–

सहजोबाई ने सहज प्रकाश, सात बार निर्णय एवं सोलह तिथि निर्णय नामक ग्रंथों की रचना की।

सहजोबाई की भक्ति–भावनाः–

सहजोबाई की भक्ति–भावना में मीराबाई की तरह ही सत्य, शील, दया, गुरू–भक्ति, साधुओं की सेवा, प्रेम, लगन, वैराग्य आदि रूप दिखाई देते हैं। सहजोबाई की भक्ति में प्रेम एवं माधुर्य का ऐसा आकर्षण था कि लोग अपने दुख–दर्द को भूलकर प्रभु का प्रत्यक्ष दीदार करते हुए दिखाई देने लगते हैं।

गुरू–भक्ति

सहजोबाई ने गुरू को सर्वोपरि माना है। सहजो की गुरू भक्ति के संदर्भ में एक जनश्रुति प्राप्त होती है जिसमें उनकी गुरू–भक्ति प्रकट होती है। एक बार ईश्वर सहजोबाई की गुरू–भक्ति से प्रसन्न होकर उनके द्वार पर आते हैं किंतु सहजोबाई के मन में उनके प्रति कोई विशेष उत्साह नहीं था।

ईश्वर ने पूछा– सहजा मैं खुल चलकर तुम्हारे द्वार पर आया हूँ और क्या तुम खुश नहीं हो। सहजोबाई हाथ जोड़कर बोलती है कि हे प्रभु! टापने मुझ गरीब पर बहुत बड़ी कृपा की है लेकिन मैं अभी आपके दर्शन नहीं करना चाहती।

ईश्वर– तुम्हारे पास ऐसा क्या है, जिसके कारण तुम मेरा दीदार नहीं करना चाहती हो।

सहजोबाई– हे प्रभु! मेरे गुरूजी पूर्ण समर्थ हैं और मैंने उनमें ही आपको प्राप्त कर लिया है।

सहजोबाई का ऐसा प्रेम भाव देखकर ईश्वर बोलते हैं, सहजो क्या तुम मुझे अपनी कुटिया में आने को नहीं कहोगी।

सहजो बाई की ऑखे अपने गुरू के दीदार के लिए ऑसुओं से भरी हुई थी। बोली, हे प्रभु! मेरी कुटिया में एक ही आसन है और उस पर मेरे गुरूजी विराजते हैं। क्या आप धरती पर बैठकर मेरा आतिथ्य स्वीकार करेंगे।

ईश्वर ने कहा– तुम मुझे जहॉ बैठने के लिए कहोगी, वहीं बैठूगॉ। भगवान नीचे ही बैठकर आसन ग्रहण करते हैं।

सहजो से बोले– मैं जहॉ भी जाता हूँ, वहॉ कुछ ना कुछ दे कर आता हूँ। तुम भी कुछ मॉगना चाहती हो तो मॉग सकती हो।

सहजो ने कहा मेरे जीवन में कोई कामना नहीं है। मुझे कुछ नहीं चाहिए।

ईश्वर बोले– फिर भी कुछ मॉग लो।

सहजो बोली– आपसे क्या मॉगू, आप तो खुद ही एक दान हो। जिसे मेरे सतगुरू अपने भक्तों को जब चाहे दान में देता है।

ईश्वर मुस्कुराते हुए कहते हैं, सहजो! आज मुझे कुछ सेवा ही दे दो।

सहजो बोलती है– हे प्रभु! एक सेवा है। मेरे सतगुरू आने वाले हैं। जब मैं उन्हें भोजन कराऊं तो आप पीछे खड़े होकर चॅवर डुला दोगे क्या?

उस परमात्मा ने सहजोबाई के गुरू संत चरणदास जी पर चॅवर डुलाया था। ऐसी सच्ची समर्पण भाव की भक्ति थी।

सहजोबाई ने अपने काव्य[3] में गुरू को परमात्मा से भी बड़ा बताते हुए लिखती है–

राम तजूँ पे गुरू न बिसारूँ। गुरू के सम हरि कूँ न निहारूँ।।
हरि न जन्म दियो जगमगाहीं। गुरू ने आवागमन छुटाहीं।।
हरि ने पॉच चोर दिये साथा। गुरू ने लइ लुटाय अनाथा।।
हरि ने कुटुम्ब जाल में गेरी। गुरू ने काटी ममता बेरी।।
हरि ने रोग भोग उरझायो। गुरू जोगी कर सबै छुटायो।।
हरि ने कर्म मर्म भरमायो। गुरू ने आतम रूप लखायो।।
फिर हरि बंध मुक्ति गति लाये। गुरू ने सब ही मर्म मिटायो।।
चरन दास पर तन मन वारूँ। गुरू न तजूँ हरि को तजि डारूँ।।

सहजोबाई कहती है कि मैं राम को छोड़ सकती हूँ लेकिन गुरू को नही भुला सकती, क्योंकि मैं उस परमात्मा को गुरू के समान नहीं देखती हूँ। गुरू का स्थान परमात्मा से भी बड़ा बताते हुए सहजोबाई कहती है कि ईश्वर संसार में जन्म देकर हमें मोह–माया के बन्धनों में उलझा देता है। गुरू जन्म–मरण के बंधनों से छुटकारा दिलाने वाला एकमात्र साधन है। जब ईश्वर हमें संसार में भेजता है तो अपने साथ पॉच चोर भी लगा देता है, जो हर समय हमें संसार में ही उलझाकर रखते हैं। गुरू हमें आत्मस्वरूप बनाकर पॉचों चोरों से छुटकारा दिलाकर परमात्मा से मिला देता है। अतः सहजोबाई स्वयं को गुरू चरणदास जी को समर्पित करते हुए कहती है कि मैं राम को छोड़ सकती हूँ, लेकिन गुरू को नहीं छोड़ सकती।

नाम–महिमा

सहजोबाई ने अपनी वाणियों में राम के नाम की महिमा का गुणगान किया है, और जिस व्यक्ति को यह प्राप्त हो जाता है उसे जन्म–मरण के बन्धन से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। तीन लोक का राज भी प्राप्त हो जाता है। अर्थात् उसे संसार से विरक्ति हो जाती है। सहजोबाई अपनी वाणी में लिखती है–

राम नाम ले सहजिया, दीजै सर्ब अकोर।
तीन लोक के राज लों, अन्त जाजाहुगे छोर।।

सहजोबाई राम नाम को इस संसार से पार करने वाले *साधन के रूप में याद करते हुए लिखती है–*

सहजो नौका नाम है, चढ़ि के उतरौ पार।
राम सुमिरि जान्यो नहीं, ते डूबे मझधार।।

नन्हा महा उत्तम का अंग–

सहजोबाई ने इस अंग में जीव की दीनता को प्रकट किया है। जीव संसार सागर से पार पाने के लिए उसे अपने आप को परमात्मा को सुपुर्द कर देना चाहिए। उसे हरदम ईश्वर की रजा में रहते हुए अपना जीवन–यापन करना चाहिए। अपने अहंकार को त्याग देना चाहिए। संसार में परमात्मा की सत्ता को सर्वोपरि मानना चाहिए। जो व्यक्ति अभिमान करते हैं वो संसार में किंकर्त्तव्यविमूढ़[4] की भॉति होते हैं–

अभिमानी नाहर बड़ो, भरमत फिरत उजाड़।
सहजो नन्ही बाकरी, प्यार करे संसार।।

मनुष्य को संसार में रहते हुए परमात्मा की सत्ता को सर्वोपरि मानते हुए जीवन–यापन करना चाहिए–

बड़ा न जाने पाइहै, साहेब के दरबार।
द्वारे ही सूँ लागि है, सहजो मोटि मार।।

प्रेम का अंग–

सहजोबाई ने अपनी वाणी में प्रेम को परिभाषित करते हुए लिखा है कि हमें संसार में जो सत्य है उससे प्रेम करना चाहिए। यहॉ सत्य से अभिप्राय जो किसी भी परिस्थिति में नहीं बदले। संसार के जितने भी साधन है, रिश्ते नाते हैं, सब क्षणिक है, नश्वर है। इसीलिए सहजोबाई सच्चा प्रेम परमात्मा से करने के लिए कहते हुए लिखती है–

चरनदास सतगुरू दिया, प्रेम पियाला छान।
सहजो मतवारे भये, तुरिया तत गलतान।।

जो परमात्मा के प्रेम में रम जाते हैं, वो दीवानों की भॉति संसार से विरक्त हो जाते हैं। ऐसे जीवों की स्थिति सहजोबाई अपनी वाणी में लिखती है–

प्रेम दिवाने जो भये, प्रीतम के रँग माहिं।
सहजो सुधि बुधि सब गई, तन की सौंधी नाही।।

अजपा गायत्री का अंग–

सहजोबाई अपनी वाणी में परमात्मा के नाम का सुमिरन करने की अवस्था को लिखती है–

ऐसा सुमिरन कीजिए, सहज रहै लौ लाय।
बिनु जिभ्या बिनु तालुवै, अन्तर सुरत लगाय।।

हमें परमात्मा की प्राप्ति के लिए अपने ख्याल को संसार से समेटकर अपनी ऑखों के पीछे टिकाना होगा, तब ही हम परमात्मा की प्राप्ति कर सकते हैं। जीव को श्वांस–श्वांस में परमात्मा के नाम का सुमिरन करना चाहिए। सहजोबाई अपनी वाणी[5] में लिखती है–

लगै सुन्न में टकटकी, आसन पदम लगाय।
नाभि नासिका माहिं करि, सहजो रहै समाय।।
सहज श्वांस तीरथ बहै, सहजो जो कोई नहाय।
पाप पुन्न दोनों छुटैं, हरि पद पहुँचै जाय।।

सत्त बैराग जगत मिथ्या का अंग–

वाणी के इस अंग में सहजोबाई ने जगत की वास्तविकता का भान कराया है। सांसारिक लोग लगत की मोहमाया में फॅसकर मनुष्य जन्म के मकसद को भूलकर रोग–भोग में उलझ जाते हैं, जिनकी स्थिति को बयान करते हुए सहजोबाई अपनी वाणी में लिखती है–

आतम में जागत नही, सुपने सोवत लोग।
सहजो सुपने होत हैं, रोग भोग और जोग।।

सहजोबाई ने संपूर्ण संसार को मायाजाल बताया है। जीव संसार को ही वास्तविकता मानकर उलझ जाता है और परमात्मा से दूर होता जाता है। जिसकी स्थिति सहजोबाई वाणी में पुष्ट करती है–

ऐसे ही सब स्वप्न हैं, स्वर्ग, मिर्तु पाताल।
तीन लोक छल रूप हैं, सहजो इन्दरजाल।।
अज्ञानी जानत नहीं, लिप्त भया करि भोग।
ज्ञानी तौ दृष्टा भये, सहजो खुशी न सोग।।

सच्चिदानन्द का अंग–

अपनी वाणियों में सहजोबाई ने परमात्मा के मूल स्वरूप का भी दर्शन करवाया है। उसे जनम–मरण, रूप–रंग, जाति–पॉति से रहित बताते हुए सत्य रूप में स्वीकार किया है। अपनी वाणी में लिखती है–

रूप बरन वा के नहीं, सहजो रंग न देह।
मीत इष्ट वा के नहीं, जाति पॉति नहिं गेह।।
आग जलाय सकै नहीं, सस्तर सकै न काटि।
धूप सुखाय सकै नहीं, पवन सकै नहीं आटि।।

नित्य अनित्य सांष्य मत का अंग–

परमात्मा को निज अनुभव के द्वारा ही जाना जा सकता है। हम उसके बारे में कितने ही आडम्बर, स्वॉग रचते हों, किन्तु हम अपने ख्याल को संसार से हटाकर अंतर्मन[6] में टिकाना पड़ेगा।

अनुभव ही सूँ जानिये, चित बुधि थकि थकि जाहिं।
तीन भॉति हंकार की, सो भी पावै नाहिं।।

निर्गुन सर्गुन संशय निवारन भक्ति का अंग–

हम अक्सर देखते हैं कि भक्ति के सगुण और निर्गुण रूप को लेकर धर्मावलम्बियों में मतभेद होते रहते हैं। किन्तु सहजोबाई यह मानती है कि परमात्मा को प्राप्त करने के दोनों की साधन उत्तम हैं। इन दोनों के मतभेद का खण्डन करते हुए सहजोबाई अपनी वाणी में लिखती है–

निराकार आकार सब, निर्गुन और गुनवन्त।।
है नाहीं सूँ रहित है, सहजो यों भगवन्त।।
निर्गुन सूँ सर्गुन भये, भक्त उधारहार।
सहजो की दंडौत है, ता कूँ बारम्बार।।

विनती और प्रार्थना–

सहजोबाई इस अंश में परमात्मा से हम जीवों की ओर से प्रार्थना करते हुए कहती है कि संसार में आकर जीव मोह–माया के बन्धन में पड़कर आपको भूल जाता है। किन्तु हे[7] परमात्मा! आप सर्वव्यापी हो, सर्वदर्शी हो। हम जीवों की अज्ञानता को दूर करते हुए अपनी शरण में लीजिए। हम जैसे भी हैं, अर्थात् पतित हैं, पावन हैं, तुम्हारे हैं। अपनी वाणी में सहजोबाई लिखती है–

तुम गुनवंत मैं औगुन भारी।
तुम्हरी ओट खेट बहु कीन्हे, पतित उधारन लाल बिहारी।।

एक वाणी में सहजोबाई परमात्मा को अपने विरद को याद दिलाते हुए लिखती है कि आप दीनों का उद्धार करने वाले हो–

तुम अपनी ओर निहारो।
हमरे औगुन पे नहीं जाओ, तुम्हीं अपना बिरद सम्हारो।।
चरणदास सहजिया तेरी, दरसन की निधि पाऊँ।
लगन लगी अरू प्रान अड़े हैं, तुमको छोड़ कहौ कित जाऊँ।।

सहजोबाई परमात्मा से पुत्रवत् प्रार्थना करते हुए कहती[8] है कि मैं आपका बालक हूँ, आप मेरे संरक्षक हो। आप अपने मधुर वचन मुझे सुनाते रहो। मुझे संसार की मोहमाया से हटाकर अपनी शरण में ले लो। इस बात को अपनी वाणी में स्थान देते हुए लिखती है–

हम बालक तुम माय हमारी, पल–पल मौहिं करो रखवारी।
निस दिन गोदी ही में राखो, इत वित बचन चितावन भाखो।।
मारौ झिड़कौ तौ नहिं जाऊँ, सरक सरक तुम्हीं पै आऊँ।
चरणदास है सहजोदासी, हो रिच्छक पूरन अबिनासी।।

निष्कर्ष:

सहजोबाई का साहित्य, समाज को अनुपम देन है। उन्होंने अपना जीवन उस समय व्यतीत किया जब समाज में स्त्री को एक अबला के रूप में देखा जाता था। आपने समाज की संकीर्ण मानसिकता से बाहर निकलते हुए समाज को एक नवीन दिशा दी। जहाँ मनुष्य एक ओर मोहमाया से ग्रस्त होकर मनुष्य जन्म के मूल मकसद को भूलकर परमात्मा से दूर हो गया है। उस मनुष्य को इन्होंने अपने उपदेशों से जागृत करते हुए नवीन ऊर्जा प्रदान की। आपने समाज को सत्य एवं प्रेम का सन्देश दिया। आपने गुरूभक्ति एवं नाम–महिमा के माध्यम से जीव को परमात्मा से मिलने का मार्ग प्रशस्त किया। मनुष्य गुरू की शरण में जाकर जनम–मरण के बन्धन से मुक्त हो सकता है। सहजोबाई अपनी वाणी में लिखती है–

बहुत गयी थोड़ी रही, यह भी रहसी नाय।
जन्म जाय हरि भक्ति बिनु, सहजो झुर मन माहिं।।

निष्कर्षतः हम सहजोबाई की गुरू–भक्ति, नाम–महिमा, प्रेम–उपदेश, अजपा–जाप, सांसारिक आसक्ति का त्याग, सच्चिदानन्द–प्रेम, निर्गुण–सगुण का सामंजस्य एवं विनती–प्रार्थना आदि संदेशों से प्रेरणा लेकर भावी जीवन को सफल एवं सुखद बना सकते हैं।

संदर्भ सूची:–

- *सहजोबाई, सहज प्रकाश सं.) शिवनारायण शर्मा, श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई सन् 1922 ई.पू.स.–80*
- *सहजोबाई, सहज प्रकाश सं.) शिवनारायण शर्मा, श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई सन् 1922 ई.पू.स.–10*
- *सहजोबाई, सहज प्रकाश सं.) शिवनारायण शर्मा, श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई सन् 1922 ई.पू.स.–09*
- *ज्योति प्रसाद मिश्र, निर्मल, स्त्री–कवि–कौमुदी, गाँधी–हिन्दी पुस्तक भंडार, प्रयाग, 1931ई.पू.स. 101*
- *सहजोबाई, सहज प्रकाश सं.) शिवनारायण शर्मा, श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई सन् 1922 ई.पू.स.–22*
- *रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, अशोक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014 ई.पू. स.–39*
- *दादू ग्रन्थावली, डॉ. बलदेव वंशी, प्रकाशन संस्था, नई दिल्ली*
- *सहजोबाई, सहज प्रकाश सं.) शिवनारायण शर्मा, श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई सन् 1922 ई.पू.स.–23*